INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD)
© 2026 IJNRD | Volume 11, Issue 2, February 2026 | ISSN: 2456-4184 | IJNRD.ORG

मुंबई परिवेश से संबंधित समकालीन हिंदी उपन्यास : शिल्प विधान

प्रो. डॉ. सदानंद भोसले
वरिष्ठ आचार्य एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग तथा हिंदी अध्ययन मंडल
सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, गणेशखिंड, पुणे-07

जाधव पोपट यशवंत

शोध सार:

'शिल्प' साहित्यकार के विचारों और अनुभूतियों की अभिव्यक्ति का कलात्मक माध्यम है, जिसके द्वारा वह अपनी रचना को सजीव रूप देता है। यह भाषा, बिंब, प्रतीक, शैली आदि की रचनात्मक संरचना से जुड़ा होता है, जो लेखक के कथ्य को प्रभावशाली बनाती है। समकालीन हिंदी उपन्यासों में मुंबई का सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और शैक्षिक परिवेश यथार्थ रूप में चित्रित हुआ है। इन उपन्यासों में उत्पीड़ित समाज, शिक्षा, राजनीति, दंगे और मानवीय संबंधों की जटिलताओं का गहन विश्लेषण मिलता है। समग्र रूप से इनकी कथा संरचना मुंबई के बहुआयामी जीवन और उसकी भाषिक-सांस्कृतिक गतिविधियों को प्रतिबिंबित करती है।'मुंबइया हिंदी' विवेच्य उपन्यासों की अभिव्यक्ति का प्रमुख भाषिक माध्यम है, जो शहर के बहुभाषिक, बहुधर्मी और बहुवर्गीय समाज का प्रतिनिधित्व करती है। यह भाषा खड़ी बोली, उर्दू, मराठी, गुजराती, तमिल, बंगाली आदि भारतीय भाषाओं के मिश्रण से बनी एक सर्वसमावेशी रूप है। उपन्यासकारों ने इसका प्रयोग पात्रानुकूल, जीवंत और परिवेशानुकूल संवाद के रूप में किया है जिससे रचनाओं में यथार्थ और स्थानीयता दोनों की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है।

प्रस्तुत उपन्यासों में भाषा का प्रयोग पात्रों, परिवेश और परिस्थिति के अनुकूल किया गया है जिससे अभिव्यक्ति अधिक प्रभावशाली और यथार्थपरक बनी है। उच्च और मध्यवर्गीय पात्र 'खड़ी बोली हिंदी' बोलते हैं जबकि निम्नवर्गीय पात्रों की भाषा 'मुंबइया हिंदी' या क्षेत्रीय बोलियों से युक्त है। चित्रात्मक भाषा का प्रयोग वातावरण और घटनाओं को सजीव रूप में प्रस्तुत करने के लिए हुआ है जिससे पाठक दृश्य को अनुभव कर सके। विराम चिह्नों—जैसे बिंदु, अवतरण और प्रश्न चिह्न का प्रयोग पात्रों की मानसिक स्थिति, रुकावटों और अनकहे भावों को व्यक्त करने हेतु किया गया है। वहीं, अपशब्दों और गालियों का प्रयोग सीमित रूप में, केवल पात्रानुकूल और परिवेशनुकूल यथार्थ के प्रदर्शन के लिए किया गया है, जिससे रचनाएँ अश्लीलता से बचते हुए वास्तविकता को प्रकट करती हैं।

विवेच्य उपन्यासों में भाषा का प्रयोग केवल संप्रेषण का साधन न होकर रचना सौंदर्य, भावनात्मकता और सर्जनात्मकता का माध्यम बना है। इनमें बिंब, प्रतीक और संकेतों के माध्यम से सामाजिक यथार्थ, पात्रों की मनःस्थिति और गहन भावनाओं को प्रभावशाली रूप में व्यक्त किया गया है। विविध भाषाओं, जैसे- हिंदी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती आदि के शब्दों के प्रयोग से भाषा में प्रवाह, स्वाभाविकता और महानगरीय परिवेश का यथार्थ प्रस्तुत है। उपन्यासकारों ने अपने कथ्य के अनुरूप आत्मकथात्मक, चेतनाप्रवाह, व्यंग्यात्मक, संवादात्मक और पत्रात्मक जैसी विविध शैलियों का प्रयोग किया है। समग्र रूप से इन उपन्यासों की भाषा और शैली ने न केवल अभिव्यक्ति को सशक्त बनाया है बल्कि मुंबई के बहुआयामी जीवन को भी जीवंत रूप में प्रस्तुत किया है।

बीज शब्द:

कथा संरचना, मुंबइया हिंदी, पत्रानुकूल भाषा, चित्रात्मक भाषा, ग्रामीण शब्द, बिंब, प्रतीक, संकेत, शब्द भंडार, मुहावरे, कहावते, शैली आदि।

साहित्यिक कृति की सहज प्रस्तुति के लिए लेखक द्वारा अपनाई गई रचना प्रक्रिया को शिल्प-विधान कहा जाता है। जो एक विधि है जिसके माध्यम से विषय-वस्तु शब्दों में अभिव्यक्त होती है। वास्तव में शिल्प का संबंध कला पक्ष से होता है। जिसमें भाषा, बिंब, प्रतीक, शब्द-योजना, मुहावरे, कहावते, शैली इत्यादि की रचनात्मक व्यवस्था होती है। प्रत्येक साहित्यकार अनुभूति और चिंतन को अभिव्यक्त करने के लिए एक विशिष्ट शिल्प का सहारा लेना पडता है। समकालीन हिंदी उपन्यासों में मुंबई के महत्व के साथ परिवेशगत सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, शैक्षिक और भाषिक गतिविधियों को गहराई से चित्रित किया है। कथा संरचना की दृष्टि से सभी उपन्यास यथार्थवादी व विश्लेषणत्मक हैं। विशेषकर 'बोरीवली से बोरीबंदर तक', 'कबूतरखाना', 'किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई', 'मुरदाघर', 'प्रिय शबनम' में उत्पीडित समाज का वास्तव है। जो सामाजिक विघटन और विषमता का क्रमिक विश्लेषण है। 'कटा हुआ आसमान', 'भ्रमभंग', 'यह भी नहीं', 'काँचघर', 'गुरुकुल' में शैक्षिक और आर्थिक परिवेश का कथा संयोजन है। 'एक जमीन अपनी', 'लडकियाँ' में विज्ञापन, मॉडलिंग को कथा आधार बनाया है तो 'आवां', 'असंतोष के दिन' की कथा संरचना में राजनीतिक संगठनों और सांप्रदायिक दंगों का वास्तव है। 'बेघर', 'सीन:75' में कृत्रिम रिश्तों की शुष्कता, तो 'दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता' में स्त्री-पुरुष संबंधों को चित्रित किया है। विचार और अनुभूति के माध्यम से इन उपन्यासों की कथा आगे बढी है, जो एक दूसरी से तार्किक ढंग से जुडकर अंत में गंभीर निष्कर्ष तक पहुँचती है। इस तरह प्रस्तुत उपन्यासों की कथा संरचना के आधार मुंबई का सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, और शैक्षिक परिवेश है जो परिवेश की भाषिक गतिविधियों से गहराई तक प्रभावित है।

'शिल्प' का दूसरा सबसे महत्वपूर्ण अंग 'भाषा' है जो उपन्यासकार के भावों को अभिव्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम है। प्रारंभ से ही मुंबई का व्यावसायिक दृष्टि से महत्व रहा है। यहाँ देश-विदेश के राजाओं ने शासन किया है इसलिए मुंबई परिवेश में किसी भी काल में भाषिक ऐक्य स्थापित नहीं हुआ। उपन्यासों की कलात्मक अभिव्यक्ति के उद्देश्य पात्रानुकूल, चित्रात्मक, विराम चिह्नों से युक्त, परिवेशनुकूल, सर्जनात्मक, मुंबइया हिंदी और न्यूनाधिक मात्रा में गाली-गलौज की भाषा को विवेच्य लेखकों ने अपनाया है। जिसमें 'मुंबइया हिंदी' का अपना अलग महत्व है। शुद्ध साहित्यिक हिंदी के साथ पात्रानुकूल बोलचाल की 'मुंबइया हिंदी' का प्रयोग सोद्देश्य किया गया है फिरभी वह न भाषा है न बोली। वह बहुभाषिक समाज का आपसी संवाद संप्रेषण का सर्जनात्मक भाषिक प्रयोग है इसलिए परिवेश निर्माण की दृष्टि से लेखकों को अलग से अधिक प्रयत्न करने की जरूरत महसूस नहीं हुई है। उपन्यासों में चित्रित बहुभाषी, बहुधर्मी, बहुवर्गीय समाज में परस्पर संपर्क व संवाद की भाषा 'मुंबइया हिंदी' है जो एक क्षेत्र विशेष की भाषा होते हुए भी वर्तमान में मुंबई के बाहर भी काफी विकसित हो रही हैं।

'मुंबइया हिंदी' शुद्ध 'खडी बोली' हिंदी नहीं है। इस पर अंग्रेजी समेत भारतीय भाषाओं का प्रभाव दिखाई देता है। शैलेश मटियानी लिखते हैं, "यों मुंबई की खास अपनी एक हिंदुस्तानी है-जो खडी बोली और

उर्दू की शैली में बोली जाती है, पर इसमें मराठी-गुजराती से लेकर पंजाबी, बंगाली, फारसी, तमिल-तेलगू और ठेठ मैथिली-अवधी के शब्द भी रहते हैं। बात यह है कि मुंबई में जब कोई मद्रासी या बंगाली हिंदी बोलने लगता है, तब वह बीच-बीच में, एकाध अपने-अपने शब्द भी लगाता जात है। ऐसा ही मराठी-गुजराती और तेलगू भाषी भी करते हैं। इस तरह मुंबई की आम भाषा की अपनी खासियत है। न्यूनाधिक, इस शहर में ही नहीं, पूरे मुंबई राज्यभर में हिंदी का यही 'मुंबइया' रूप प्रचलित है।"[1] मटियानी के उक्त वक्तव्य से 'मुंबइया हिंदी' के विकास और व्याप्ति का पता चालता है। मुंबई महानगर में एक साथ भारतीय भाषाओं के अनेक रूप देखने को मिलते हैं लेकिन भाषिकवाद की दृष्टि से 'मुंबइया हिंदी' को लेकर आपत्ति का एक भी उदाहरण आज तक सामने नहीं आया है। यह उसकी खासियत और सर्वसमावेशकता है। जिसके कारण विवेच्य उपन्यासों में 'मुंबइया हिंदी' का प्रयोग अधिक हुआ है। अतः 'मुंबइया हिंदी' के कारण प्रस्तुत उपन्यासों में लयबद्धता है, व्यावकरण की अपेक्षा भाव संप्रेषण है, आपसी संवाद योजना का प्रयास है और परिवेश विशेष की अभिव्यक्ति क्षमता है।

पात्रानुकूल भाषा की दृष्टि से विवेच्य उपन्यासों में उच्च व मध्यवर्ग के पात्रों के लिए 'खडीबोली हिंदी' का प्रयोग हुआ है। 'एक जमीन अपनी' की अंकिता, मेहता, नीता, 'आवाँ' की नमिता, अन्ना साहब, स्मिता, अंजना वासवानी, 'दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता' का नील, पारूल, कुमुद, श्रीमती मेहताब दस्तूर, 'बेघर' की संजीवनी, 'भ्रमभंग' का चंदन, 'प्रिय शबनम' के मंगल और शबनम आदि की भाषा हिंदी है। इनकी भाषा में पात्रानुकूल शालिनता है। इसके अतिरिक्त 'आवाँ' के पवार की भाषा उसके व्यक्तित्व के अनुकूल खुरदरी, दबंग है, तो नमिता की माँ कर्कश, गाली-गलौज से युक्त और ब्यूटिशियन मारिन की भाषा 'मुंबइया हिंदी' है। 'किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई' व 'कबूतरखाना' में लेखक ने गुजराती सेठ-सेठानियों के लिए गुजराती तो महाराष्ट्रीय चरित्रों के लिए आवश्यकतानुसार मराठी भाषा का प्रयोग किया है।

निम्न वर्गीय पात्रों की भाषा चरित्र-चित्रण और परिवेश चित्रण में समान रूप से योगदान देती है। 'मुरदाघर' में वेश्याओं के चरित्रांकन के लिए वाचाल और स्पष्ट भाषा का प्रयोग है। जगदंबाप्रसाद दीक्षित ने इसमें परिवेशानुकूल पात्र और उनके व्यक्तित्व के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया है, "...हाँ...आ रहा है अंधेरे के पीछे से...जवान...मनचला-सा मंगला...नूरन...चंद्री...सबकी नजर पडती है एक साथ। मंगला सबसे आगे।...देखो रे! तुम कोई लोक इधर नहीं आना। अभी से च बोलती मैं। मैं च पटाऊँगी इसकू...। बिगडती है नूरन।...क्यूँ पटाएंगी तू च। नाम लिखा के लायी क्या? जब देखो तब मैं...मैं...मैं। दूसरे क्या फजूल के आयेले हैं।''[2] वेश्याओं के आपसी कलह के माध्यम से लेखक ने पहले वातावरण निर्माण किया है और बाद में प्रसंगानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। वेश्याओं की भाषा बोलचाल की 'मुंबइया हिंदी' है जो उनकी गरीबी, लाचारी और अनपढता को दिखाने में समर्थ है। परिवेश और चरित्र के अनुसार जब लेखक भाषा का प्रयोग करता है, तब वह भाषा अधिक रोचक, जीवंत एवं प्रवाहमयी लगती है। जगदंबाप्रसाद दीक्षित ने 'मुरदाघर' और 'कटा हुआ आसमान' में 'समाज-व्यवस्था' व 'परिवेश' को ही मुख्य चरित्र के रूप में चित्रित किया है।

INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD)
© 2026 IJNRD | Volume 11, Issue 2, February 2026 | ISSN: 2456-4184 | IJNRD.ORG

चित्रात्मक भाषा का संबंध उपन्यासों के अभिव्यक्ति पक्ष से है। यहाँ चित्रात्मक भाषा का प्रयोग वर्णन प्रधान घटना, प्रसंग, वस्तु, व्यक्तित्व आदि के लिए उपयुक्त सिद्ध हुआ है इसलिए विवेच्य उपन्यासों में चित्रात्मक भाषा का परिवेश चित्रण में विशेष महत्व रहा है। वास्तव में कल्पना करने या सोचने पर मानसपटल पर उभरने वाली आकृति को चित्र कहते हैं। चित्रा मुदगल लिखित 'आवां' में 'शिवकुमारी देवी' की 'चाल' का यथार्थ परिवेश चित्रित है, "दो चालियों के बीच उतराई नाली की पच-पच में सुअरियों के बच्चें और आदमी के दो नन्हें-मुन्नें अपने-अपने खेल में मग्न थे। निर्द्वद्व सुअरियों के बच्चें बोदे में पसरी पडी आराम फारमा रही माँओं के थनों पर टूट पड रहे थे-एक-दूसरे को धकियाते-मुकियाते। बच्चों के हाथ में छोटी शिशियां थी । वे गंदले पानी में कीडों-सी शक्ल वाली मछलियां खांभो-ढढ रहे थें ।''[3] प्रस्तुत अवतरण में परीवेशगत गंदगी, बच्चों की हरकतें, सुअरियों और उनके नन्हें पिल्लों के क्रियाकलापों का चलचित्र आंखों के सामने से गुजरता हुआ सा लागता है। घटना वर्णन इतनी कलात्मता से किया है कि हमारे सामने एक सजीव दृश्य खडा हो जाता है। लेखिका ने 'परिवेशगत गंदगी' का सीधा उल्लेख नहीं किया है लेकिन 'नाली की पच-पच' से पाठक स्वतः दुर्गंध की कल्पना करता है या प्रयुक्त भाषा गंध का अभास उत्पन्न कर रही है। इस तरह उपन्यासों की छोटी-छोटी घटनाओं और प्रसंगों को सजीव बनाने के लिए चित्रात्मक भाषा का प्रयोग किया है। जो अत्यंत सशक्त, प्रभावशाली और भावपूर्ण है। चित्रात्मक भाषा का प्रयोग केवल वर्णन न होकर अनुभव कराने के लिए हुआ है ऐसा प्रतीत होता है।

विवेच्य उपन्यासों में अतिरिक्त बिंदु चिह्नों (डॉट्स), संयोजन रेखाओं, प्रश्न चिह्नों, विस्मयादि और अंतराल चिह्नों का प्रयोग अधिक हुआ है। जो पात्रों के सूक्ष्म भावों तथा अनकहे तथ्यों की अभिव्यक्ति के उद्देश्य किया गाया है। इनकी सहायता से पाठकों को गहराई से सोचने के लिए विवश किया गया है और अनकहे संकेत भी इनके प्रयोग द्वारा दिए गए हैं। मानसिक परेशानियों, तनावपूर्ण और यौन भावनाओं के रेखांकन हेतु भाषा में 'डॉट्स व अवतरणों' का जानबूझकर प्रयोग किया है। आवश्यकतानुसार लगभग सभी उपन्यासों में हिंदी के विराम चिह्नों का सार्थक प्रयोग हुआ है। जिसके माध्यम से उपन्यासकार अधिक से अधिक विचारों को व्यक्त करना चाहते हैं। देवश ठाकुर ने 'कबूतरखाना' में ऐसी भाषा का प्रयोग पात्रों की मानसिकता को चित्रित करने के लिए किया है, ''खाली-पिली भी फुकट '......' लोग बाप का घर में ले के जाईंगा! काहे कूँ लेके जाईंगा, रे? दारू का वास्ते?...साला, क्या हम दारू पिया है, रे?...पिया है, तो क्या साला किसी आइ को '.......' के पैसा लाया क्या?...।''[4] लेखक ने अवतरण और बिंदु चिह्नों के माध्यम से गणपत रामा के क्रोध, आक्रोश व तर्कहीन प्रतिक्रिया को रेखांकित किया है। वह अनपढ है तथा ठीक से न बोल पाने की स्थिति में जान-बूझकर कुछ क्रियाओं पर जोर दे रहा है। जिससे उसकी मानसिक अवस्था, हिचकिचाहट, रूकावट और बोलने का ढंग स्पष्ट हो रहा है। बिंदु चिह्न स्पष्ट रूप से अधूरे विचार या आनेवाले विचारों को जगह देते हुए दिखाई दे रहे हैं। साथ ही गाली-गलौज से बचने के लिए लेखक ने 'अवतरण' और 'डॉटस्' का प्रयोग किया है। इस तरह प्रस्तुत उपन्यासों में भाषिक स्तर पर वाक्यों के अंत में रिक्त जगहों या बिंदियों का प्रयोग सोद्देश्य किया गया है। लेकिन जरूरत से अधिक प्रयोग के कारण कहीं-कहीं निरर्थकता मेहसूस हो रही है। विचारों की बोझिलता, अनपेक्षित अर्थ ग्रहन की संभावना को भी झूटलाया

नहीं जा सकता। भावों की प्रवाहमयता में खंड पड जाता है इसलिए यह सीधी और सरल शैली नहीं लगती है। फिरभी भाषिक सौंदर्य वृद्धि की दृष्टि से विराम चिह्नों का प्रयोग सार्थक बन पडा है।

साहित्य में अपशब्दों का प्रयोग करना अवांछित होता है परंतु पात्रानुकूल व परिवेशानुकूल वास्तविकता के उद्देश्य से सांकेतिक रूप में लेखक कभी-कभी इनका प्रयोग करता है। विशिष्ट परिस्थितियों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक विषमताओं से युक्त परिवेश में अनायास या आक्रोशवश अपशब्द पात्रों के मुँह से निकलते हैं। इससे पात्रों का व्यक्तित्व और स्थानीय परिवेश की विशिष्टता पर भी प्रकाश पडता है लेकिन व्यक्तित्व और स्थानीय परिवेश के लिए इन शब्दों का प्रयोग हो ही यह अनिवार्यता नहीं ।

असुविधावश भावताव में स्वयं या दूसरों के लिए मुँह से कभी-कभी गाली निकलती है। उपन्यासों में प्रत्यक्ष गालियों का प्रयोग न करके माँ, बहन की गाली के संकेत मात्र दिए हैं परंतु कुछ प्रसंगों में परिवेश की विभिषिकाओं से त्रस्त, झुंझलाहटवश हिंदी के साथ अंग्रेजी की सामान्य गालियों का प्रयोग हुआ है। निम्नवर्ग के पात्र अधिकतर बोलते समय अनायास रूप में गालियाँ बकते हैं। मुंबई में यातायात की समस्या से लोग त्रस्त हैं। जिसका लोगों की मानसिकता पर विपरित परिणाम होता है। 'कटा हुआ आसमान' में ट्रैफिक जाम होने पर बस कंडक्टर और टैक्सी ड्रायवर एक दूसरे को गालियाँ देते हैं, "ट्रैफिक जाम। सामने टैक्सी अटक गई है। साला। बहन की गाली। बस का ड्राइवर सिर निकालता है। हरामजादा सडक तुम्हारा बाप का है? माँ की गाली। टैक्सी ड्राइवर चिल्लता है। हमारा बाप का नहीं, तुम्हारा बाप का है?"[5] यहाँ गालियाँ परेशानियों से निजात पाने की, असुविधा के लिए भडास निकालने की सहज प्रवृत्ति है। इससे ज्यादा कुछ भी नहीं है। व्यवस्था के आगे हतबल आदमी का किसी न किसी पर गुस्सा निकलना स्वाभाविक है क्योंकि व्यवस्था से लडने की उसकी औकात नहीं होती। इसलिए वह अपने समान अन्य पीडितों को गालियों से चोट पहुँचाने वाली भाषा का प्रयोग करके आत्मसुख का अनुभव करता है।

उपन्यासों में प्रयुक्त अपशब्द निम्न वर्ग के आक्रोश और विवशता का वास्तव है। इसके अलावा सर्जनात्मक दृष्टि से इनका कोई औचित्य नहीं है। उपन्यासों में भद्दी गालियों का खुलकर और स्पष्ट रूप से प्रयोग न करके 'बहन की गाली', 'माँ की गाली' लिखकर अश्लीलता से बचने का प्रयास किया है। जब किसी पात्र को असुविधा होती है तो उसके मुख से अपने आप गाली निकलती है। इसे मानवी स्वभाव मानकर अनदेखा भी किया जा सकता है क्योंकि विवेच्य उपन्यासों प्रयुक्त गालियाँ केवल आपसी संवाद का तेवर लागती हैं। इनका प्रयोग आवेश और उत्तेजना की स्थिति में सर्वाधिक हुआ है।

भाषा के कलागत प्रयोग में बिंब, प्रतीक, संकेत केवल विचार संप्रेषण के माध्यम न होकर अभिव्यक्ति के अंग होते हैं जो किसी भी रचना को सौंदर्य, भावात्मकता और सर्जनात्मकता प्रदान करते हैं। आलोच्य उपन्यासों में प्रसंगानुकूल बिंबात्मक, प्रतीकात्मक और सांकेतिक भाषा का प्रयोग हुआ है। सामाजिक बिंबों के माध्यम से मानवी भावों को व्यक्त करने में उपन्यासकारों को सफलता मिली है। चित्रा मुदगल ने 'एक जमीन अपनी' में परिवेशगत स्थितियों और पात्रों की मनोवृत्ति को साकार रूप देने का प्रयास किया है। इसमें अधीर भीड की मानसिकता के बिंब को प्रस्तुत करती हुई वह लिखती हैं, "दूर, एक बिंदु एक धब्बे की

शक्ल में परिवर्तित होते-होते लोकल के रूप में प्लेटफार्म छूने लगा।''[6] जीवन में कुछ काम अन्य व्यवस्था पर निर्भर होते हैं। हम चाहकर भी ऐसी स्थितियों में कुछ नहीं कर सकते हैं। इस तरह के जीवन को लेखिका ने बिंब के माध्यम से समझाने का सफल प्रयास किया है। साथ ही बिंबात्मक भाषा प्रयोग से ऐसा प्रतीत होता है कि लेखिका की अभिव्यक्ति में चित्रात्मकता आ गई है।

इसी तरह पात्रों की मनःस्थिति के साथ-साथ महत्वपूर्ण घटनाओं, गंभीर विषयों और उलझे प्रसंगों को प्रतीकात्मक भाषा के माध्यम से प्रकट किया है। अधिकत्तर उपन्यासों के शीर्षक ही प्रतीकात्मक हैं। जैसे- 'काँचघर' पारदर्शी महानगर का प्रतीक है। 'कबूतरखाना' में चित्रित 'भुलेश्वर' कबूतरखाना' का तो रामा नौकर कबूतर के प्रतीक हैं। 'दो मुर्दों के लिए गुलदस्ता' में 'दो मुर्दे' बेरोजगार युवकों की छटपटाहट का तो 'गुलदस्ता' लेखक की सहानुभूति, राहत और संवेदना का प्रतीक है। 'मुरदाघर' घिनौनी बस्तियों में जी रहे लोगों का प्रतीक हैं। 'बेघर' घर से बाहर हो जाने का प्रतीक है। इस तरह प्रतीक योजना के माध्यम से उपन्यासों की कलात्मक अभिवृद्धि का भी परिचय मिलता है। इसके अलावा लेखकों ने स्त्री-पुरुष संबंधों के वर्णन में अश्लीलता से बचने के लिए 'संकेतों' से युक्त भाषा का प्रयोग किया है। साथ ही सामाजिक, राजनीतिक और शैक्षिक समस्याओं को समझाने के लिए भी आलोच्य उपन्यासों में सांकेतिक भाषा का प्रयोग किया है।

विवेच्य उपन्यासों में तत्सम्, तद्भव, देशी-विदेशी शब्दों की विपुलता दिखाई देती है। प्रयुक्त शब्दों का यथास्थान प्रयोग उपन्यासकारों की शब्द-संपदा से परिचित करा रहा है। साथ ही अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, पंजाबी के शब्द प्रयोग से भाषा अधिक सशक्त लगती है और प्रयोग भी प्रशंसनीय है। इन विविध शब्दों और भाषाओं के सहयोग से परिवेश चित्रण और कथ्य को व्यक्त करने में उपन्यासकारों को सफलता मिली है। एक साथ अनेक भाषाओं के शब्द प्रयोग से कहीं समीक्ष्य उपन्यासों में बोझिलता, नीरसता और दूरूहता नहीं आई है बल्कि उपन्यासों में प्रवाहमानता ही परिलक्षित होती है। भाषा की संप्रेषणीयता में सहजता आ गई है। महानगरीय परिवेश के अनुकूल इस भाषा में आवश्यकतानुसार घटना, प्रसंग, पात्र, व्यवसाय को मध्यनजर रखते हुए विभिन्न भाषाओं के शब्दों का प्रयोग हुआ है। प्रयुक्त भाषा और उसके शब्द सामान्य व्यवहार के होने के कारण उनमें एक सहज प्रवाह है। विदेशी भाषाओं में अंग्रेजी शब्दों और वाक्यों का अत्याधिक प्रयोग है । उपन्यासों में चित्रित परिवेश महानगरीय होते हुए भी इनमें कहावते, मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग यथास्थान हुआ है। जिसका कारण है उपन्यासों के पात्र मुंबई के मूल निवासी नहीं हैं। वे देश के विविध भागों से रोजीरोटी की तलाश में यहाँ आकर बसे हुए हैं।

विवेच्य उपन्यासकारों ने अपनी रचनाधर्मिता की नवीनता को प्रकट करते हुए कथ्य के अनुरूप विविध शैलियों का प्रयोग किया है। देवेश ठाकुर लिखित 'भ्रमभंग' प्रधानतः आत्मकथात्मक शैली, 'प्रिय शबनम' पत्रात्मक शैली तो 'काँचघर' संवाद शैली का एक नवीनतम प्रयोग है। इसके संवादों में महानगरीय विसंगतियों की अभिव्यक्ति है। 'कटा हुआ आसमान' चेतनाप्रवाह शैली और 'मुरदाघर' व्यंग्य शैली का उत्तम उदाहरण है। इसमें जगदंबाप्रसाद दीक्षित ने पुलिस प्रशासन पर व्यंग्य करते हुए उसकी असलियत का पर्दाफास किया है। देवेश ठाकुर ने जोड-तोड करके 'पीएच.डी.' की उपाधि पाने वालों और विद्वत्ता का

आडंबर करने वालों की असलियात पर व्यंग्य किया है, "थोडी सी दाढी बढा लो और बंबई के अज्ञेय बन जाओं।---दाढी से थोडी परसैनिलिटी भी निकल आएगी---।"[7] लेखक ने साहित्यिक व शैक्षिक परिवेश के नकली विद्वानों का पर्दाफाश कारने के लिए व्यंग्य शैली का प्रयोग किया है । इसके अतिरिक्त व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग खासकर राजनीति, सामाजिक विद्रूपताओं को सशक्त रूप में सामने लाने के लिए किया है। विवेच्य उपन्यासों में शैली की एकरसता बिल्कुल भी नहीं है। इनमें आवश्यकतानुरूप वर्णनात्मक, पूर्वदीप्ति, चेतनाप्रवाह, संवाद, व्यंग्यात्मक, पत्रात्मक, विज्ञापन, साक्षात्कार और टेलिफोन संवाद आदि शैलियों का प्रयोग हुआ है।

निष्कर्षतः मुंबई परिवेश से जुडे समकालीन हिंदी उपन्यासों का शिल्प विधान प्रयोगशील, सशक्त और उद्देश्यपूर्ण है। उपन्यासकारों का प्रत्यक्ष रूप में आवश्यकतानुरूप उपस्थित रहना प्रस्तुत उपन्यासों को एक 'वैचारिक दस्तावेज' का दर्जा प्रदान कर रहा है। इस तरह इन उपन्यासों में कथा संरचना, भाषा, शैली, विषयवस्तु, बिंब, प्रतीक, शब्द इत्यादि शिल्पगत उपकरणों की योजना परिवेशानुकूल नए रूप में दिखाई दे रही है। मुंबई परिवेश को प्रस्तुत करने वाले विवेच्य सभी उपन्यासों के भाषा तथा शिल्प पर 'मुंबइया हिंदी' का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जो इन उपन्यासों को एक विशिष्टता प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

1. शैलेश मटियानी, किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई, आत्माराम एंड संस प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1959, पृ. 59
2. जगदंबाप्रसाद दीक्षित, मुरदाघर, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1972, पृ. 37
3. चित्रा मुदगल, आवां, सामयिक प्रकाशन, दिल्ली, स.1999, पृ. 107
4. शैलेश मटियानी, कबूतरखाना, आत्माराम एंड संस प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1960, पृ. 3
5. जगदंबाप्रसाद दीक्षित, कटा हुआ आसमान, अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, सं. 1971, पृ. 35
6. चित्रा मुदगल, एक जमीन अपनी, सामयिक प्रकाशन, दिल्ली, स. 1990, पृ. 56
7. संपा. सतीश पांडेय, देवेश ठाकुर रचनावली-1 (कांचघर), संकल्प प्रकाशन, मुंबई, सं. 1992, पृ. 312

• **Copyright & License:**
© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.